2

हिंदी बाल काव्य का बदलता स्वरूप और बच्चे

टीना कुमारी*

समयानुरूप बदलते काव्य में बच्चों की आकांक्षाएँ, उनका व्यवहार, स्वभाव बखूबी उभरा है। बच्चों के मस्ती भरे रोचक कारनामों और खयालों से लेकर आधुनिकता के साथ उभरे बच्चे का अकेलापन और दोस्तों का अभाव सब कुछ कविताओं में बिखरा है। बाल काव्य की यात्रा के दौरान प्रवृत्तियाँ एवं मिजाज़ भी बदले हैं। यह लेख हिंदी बाल काव्य के बदलाव को ही करीब से देखता है। काव्य केवल तथ्यों के साथ ही नहीं कविताओं के बदलते मिजाज़ को उदाहरण सहित समझने की कोशिश करता है। लिखित रूप में पिछले सौ वर्षों के दौर का काव्य मोटे तौर पर कैसा दिखता है और बच्चों से कैसे जुड़ता है आदि की एक कड़ी देखने को मिलती है।

बाल साहित्य का मूल आशय बालक के लिए सृजनात्मक साहित्य से है। बाल साहित्य का उद्देश्य बाल पाठकों का मनोरंजन करना ही नहीं, अपितु उन्हें आज के जीवन की सच्चाइयों से भी परिचित कराना है। प्राचीन बाल साहित्य के रूप में लोक कथाएँ, लोरियाँ और खेलगीत लिए जा सकते हैं। युग परिवर्तन के साथ-साथ इनका मौखिक आदान-प्रदान होता रहा है। बाल साहित्य की सुरमयी धारा है—बाल काव्य। बाल साहित्य के विविध अंगों में बाल्य काव्य का विशिष्ट स्थान है। सामान्यतः नवजात से 16 वर्ष की आयु को बालपन माना गया है और इनके लिए लिखा काव्य बाल काव्य है। पाँच से चौदह वर्ष तक का बाल वर्ग बाल काव्य से जुड़ा वास्तविक वर्ग है (डोभाल, 1990)। बाल काव्य में तुकबंदी, लोरी, पहेलियाँ, शिक्षाप्रद कविताएँ, चुटकुले, जीभ के करतब और अंग्रेज़ी *राइम्स* से प्रभावित कविताएँ रखी जा सकती हैं (घोष एवं कुमार, 1999)। हिंदी बाल काव्य में लोरियों एवं शिशु गीतों की समृद्ध धारा है। बाल काव्य में खेल गीतों को भी समाहित किया गया है। हिंदी बाल काव्य बालक के जीवन में छुटपन से ही लोरियों के रूप में घुलने लगता है। बाल कविता का नटखट अंग शिशु गीत यदि अच्छे हों तो बच्चे के मन पर एक तरह का स्थायी छाप छोड़ते हैं और बड़े होने पर भी उनका प्रभाव फ़ीका नहीं पड़ता। कविताएँ वर्णन करने का स्वाभाविक तरीका भी बखूबी सिखाती हैं। बच्चों में कल्पनाओं की गति अत्यधिक तीव्र होने पर

**शोधार्थी,* पी.एच.डी. (द्वितीय वर्ष), शिक्षा विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

कभी-कभी असंगत और असंबद्ध हो जाती है। बच्चे ऐसी कल्पनाओं की अभिव्यक्ति बालगीतों में पाकर आनंदित होते हैं। इस प्रकार के बाल गीत निरर्थक बाल गीत कहे जाते हैं। इनमें कल्पना की विचित्रता होती है जो प्रसन्नता देती है —

दूध जलेबी जग्गा.....
उसके अंदर मग्गा.....

राममूर्ति त्रिपाठी के अनुसार बाल काव्य का सूत्र लोरी है। वे 3–5 वर्ष के बच्चों हेतु 4–8 पंक्तियों वाली तुकान्त ध्वन्यात्मक शब्दों वाली लयबद्ध कविताओं को उचित मानते हैं। आरंभ में बाल साहित्य बड़ों के लिए लिखे गए साहित्य के रूप में ही था फिर इन्हीं से बच्चे लाभान्वित होने लगे। शनैः शनैः शिशु गीतों और बाल कविताओं ने भी जन्म लिया। बाल काव्य बच्चों की सजीव कल्पना और सहज भावनाओं की अभिव्यक्ति का सुंदर माध्यम बना। बच्चे के मन में अपने परिवेश, घर, परिवार, आसपास के माहौल और दुनिया की पहली छाप इन्हीं कविताओं से पड़ती है। ये नटखट कविताएँ केवल कविताएँ नहीं, बल्कि बच्चों के लिए रंग-बिरंगे खिलौने भी हैं। जिनसे वह मनमाने ढंग से खेलते हैं। वह हँसता है, किलकता है और यहाँ तक कि उसके साथ-साथ स्वयं भी रचता है और अपनी कल्पना की भूख शांत करता है —

चूहे राजा हैं शैतान
चलते हरदम सीना तान
इसीलिए तो बिल्ली मौसी
खींचा करती उनके कान।
कलकत्ते से गाड़ी आई
टॉफ़ी, बिस्कुट, केले लाई
गाड़ी बोली ई- ई- ई....
आहा! उसने सीटी दी...।

अमीर खुसरो की कुछ मुकरियों और पहेलियों द्वारा भी बाल काव्य की झलक मिलती है, उदाहरणार्थ —

एक थाल मोती से भरा। सबके सिर पर औंधा धरा।
चारों ओर वह थाली फिरे। मोती उसमें एक न गिरे।।
(आकाश)

भक्तिकालीन एवं रीतिकालीन कवियों द्वारा लिखी गई सरल भाषा वाली कुछ कविताएँ बालकों के लिए उपयोगी हैं। साथ ही रसखान एवं सूरदास द्वारा 'श्रीकृष्ण का बाल वर्णन' अद्वितीय है। किंतु ये सभी बाल काव्य की श्रेणी के पैमानों पर पूरी तरह से खरे नहीं उतरते। बाल कविता बालमन के निकट की बालक के लिए रचना होती है। जबकि बालक द्वारा रचित रचना बड़ों के लिए भी हो सकती है और प्रायः होती है। बच्चे भी बड़ों से ज़्यादा बात कहने की क्षमता रखते हैं। बाल कविता अपने समय के बच्चे से ही प्रेरणा के लिए होती है। उदाहरण के लिए, समय विशेष की ज़रूरतें, प्रभाव, वातावरण इत्यादि का ध्यान होने से ही रचना सदा प्रासंगिक बनी रहती है। बाल काव्य अर्थात् बच्चों का काव्य। बाल्यावस्था की कुछ विशेषताएँ या प्रवृत्तियाँ, जैसे— जिज्ञासा, कल्पना, रचनात्मकता, निर्देश, संयम की प्रवृत्ति, आत्म प्रदर्शन की प्रवृत्ति, अनुकरण की प्रवृत्ति, स्पर्धा, सहानुभूति, विनय और आवर्तन इत्यादि होती हैं। ऐसा काव्य जो इन प्रवृत्तियों को ध्यान में रखकर लिखा जाए वही उत्तम काव्य है। कल्पना काव्य की भाषा होती है। बाल काव्य कल्पना वैभव से संपन्न काव्य है।

प्रकाशमनु की पुस्तक *हिंदी बाल कविता का इतिहास* में मोटे तौर से बाल कविता को निम्नलिखित तीन चरणों में बाँटा है—

1. प्रारंभिक युग (1901–1947)
2. गौरव युग (1947–1970)
3. विकास युग (1971 ....)

स्वतंत्रता से पूर्व के समय में गुलामी के बंधनों को काटने के लिए बालकों के व्यक्तित्व निर्माण की प्रेरणा से शुरू-शुरू में सायास बाल कविताएँ लिखी गईं। वे देशभक्ति और उपदेशात्मकता के भार से अतिशय दबी हुई कविताएँ हैं। बाल काव्यकार बालक के व्यक्तित्व को आदर्शों और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के अनुसार ढालना चाहता था, अतः मनोवैज्ञानिक दृष्टि बाल काव्य में पूर्णतः विकसित नहीं हो पाई। किंतु इसी दौर में खड़ी बोली हिंदी कविता के जन्मदाताओं में से एक पंडित श्रीधर पाठक उल्लेखनीय हैं। हिंदी के प्रारंभिक बाल गीतकारों में गिने जाने वाले श्रीधर पाठक जी ने बाल स्वभाव, बाल-मनोवृत्ति एवं बाल-मनोविज्ञान का ध्यान रखते हुए सतर्कता के साथ-साथ बाल काव्य के लिए विषयों का चयन किया है। इनकी कविताओं का चंचल एवं खिलंदपन खास तौर से भाता है। इस कविता में भारतीय वातावरण की गर्मज़ोशी और बच्चे का लगाव एवं उसका कल्पना संसार दोनों ही बढ़िया ढंग से सामने आते हैं इसका एक उदाहरण इस प्रकार है—

“बाबा आज देल छे आए,
चिज्जी-पिज्जी कछु न लाए,
बाबा क्यों नहीं चिज्जी लाए,
इतनी देली छे क्यों आए?.....”

इसी दौरान विद्याभूषण विभु की ‘घूम हाथी, झूम हाथी’ बड़ी चर्चित रचना रही। विद्याभूषण विभु ने हिंदी के प्रारंभिक दौर में अनेक सुंदर शिशु गीत लिखकर एक बड़े अभाव की पूर्ति की। इस काल में ‘शिशु’ एवं ‘बालसखा’ जैसी महत्वपूर्ण बाल पत्रिकाओं ने बाल कविता को आगे ले जाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। “मैथिलीशरण गुप्त, रामनरेश त्रिपाठी, अयोध्या सिंह उपाध्याय ‘हरिऔध’ जी के इस काल में बाल काव्य की हिंदी कविता में आगे चलकर जो रूप और प्रवृत्तियाँ दिखाई पड़ीं—चाहे नाटकीय ढंग की कथात्मक कविताओं का चलन हो या फिर ध्वन्यात्मक प्रभावों के जरिए बच्चों के मन को रिझाने और प्रभावित करने की कोशिश, बीज रूप में ये सभी चीज़ें हिंदी बाल कविता के इस दौर से आती हैं।” (मनु, 2003)

इस धारा में आगे का समय (1947 से 1970) यहाँ उभरी सुंदर एवं विविध प्रवृत्तियों को और विस्तार देने वाला रहा। हिंदी बाल कविता जितनी मुक्त और बहुरंगी इस दौर में थी, उसने जैसी अद्भुत उड़ानें भरी और जीवन जितना खुलकर नाटकीय संवेगों के साथ इस युग की बाल कविता में आया, वह अद्वितीय था। निरंकार देव सेवक, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना, दामोदर अग्रवाल इत्यादि नामों ने इस दौर को बहुचर्चित एवं सदैव लुभावनी बनी रहने वाली बाल कविताएँ दीं। उदाहरणार्थ—

“इब्नबतूता पहन के जूता
निकल पड़े तूफान में
थोड़ी हवा नाक में घुस गई,
थोड़ी घुस गई कान में....”

(सर्वेश्वरदयाल सक्सेना)

यह कविता एक अजब सी *कॉमिक ट्रेजडी* का आभास देती है। 'इब्नबतूता' जैसा कोई दमदार पात्र बाल काव्य में नहीं दिखता। इसी समय श्री प्रसाद जी की कविताएँ छंद और लय की उस्तादी और संपूर्णता का अहसास देती हैं। उदाहरणार्थ— 'मुर्गे की शादी' का रोचक चित्र देखिए—

"ढम-ढू, ढम-ढम ढोल बजाता
कूद-कूदकर बंदर
छम-छम घूँघरू बाँध-बाँध नाचता
भालू मस्त कलंदर,
कुहू-कुहू कू कोयल गाती
मीठा-मीठा गाना,
मुर्गे की शादी में है बस
दिन भर मौज मनाना।....."

(श्री प्रसाद)

सोहनलाल द्विवेदी, सुमित्रानंदन पंत, रामधारी सिंह 'दिनकर', बालस्वरूप राही इत्यादि बाल काव्य की तेज़पूर्ण विभूतियाँ इसी समय कार्यरत थीं।

दामोदर अग्रवाल रचित 'बिजली' पर लिखी सर्वोत्तम कविता इसी काल की है। बाल काव्य की यात्रा में रमेश तैलंग की यह कविता एक नया आयाम और पड़ाव देती है—

"अले छुबह हो गई
आँगल बुहाल लूँ
मम्मी के कमले की तीदें थमाल लूँ...."

इस कविता में एक बच्चा है और उसकी व्यस्तता के सभी कारण सच्चे हैं। यह सक्रिय और ज़िम्मेदार बच्चा काफ़ी हरफ़नमौला है और बच्चे की एक नई छवि देता है। रमेश तैलंग की यह कविता बाल काव्य को एक नई सोच, बदलती छवियों और प्रतीकों की ओर मार्ग दिखाने में अद्वितीय है। 1971 अब तक का समय वह है जब एक नहीं, अपितु तीन से चार पीढ़ियों के कवि एक साथ बाल काव्य सृजन में लीन थे। इस दौर में दिविक रमेश, प्रयाग शुक्ल, चंद्रदत्त इंदु, गोपीचंद श्रीनगर इत्यादि कवि सृजन में लगे थे। यह जानना महत्वपूर्ण है कि इस दौर की कविता द्वारा पहली बार विचार तत्व का दखल दिखाई दिया। बच्चे पर बस्ते और पढ़ाई का बोझ तथा उसकी भीतरी दुनिया की उलझनें बाल कविता में नज़र आईं। कई प्रमुख बाल कवियों ने इस दौर में बच्चे के लगातार भारी होते हुए बस्ते के बोझ और उससे दबकर 'मुक्ति' के लिए कातर अनुरोध करते बच्चे के कारण, मार्मिक चित्र आदि अपनी कविताओं में उकेरे हैं। बच्चे की विवशता निहायत सच्चे और हृदयद्रावक के रूप में जैसी बाल कविता में प्रकट हुई है, वैसी शायद ही कहीं और सामने आई। इसी तरह आधुनिकता के साथ बच्चे का अकेलापन और दोस्तहीनता भी कविताओं में झलकी है। इस दौर की बाल कविता सपनों की घाटी में ही विश्राम नहीं लेती, बल्कि बदले हुए समय की मुश्किलों और आपदाओं से भी दो-चार होती है। हम देख सकते हैं कि बाल कविताओं की यात्रा के दौरान प्रवृत्तियाँ एवं मिज़ाज भी बदले हैं। बाल काव्य चाहे जैसे भी दौर से गुज़रा, किंतु यह सत्य है कि कविता ने पिछले सौ बरसों से पीढ़ी-दर-पीढ़ी भारतीय बचपन का मानसिक और भावात्मक पोषण किया, उसे उन्मुक्त हँसी, उमंगें और मीठी खिला खिलाहटें दीं। बच्चों की कल्पना और जिज्ञासा-क्षितिजों का विस्तार

करके उसे सहृदय इंसान और बेहतर नागरिक बनाने की पुख्ता नींव रखी।

हिंदी बाल काव्य हमें भाषा और संप्रेषण के विकास की नींव प्रदान करता है। ध्वनि अपने प्राकृतिक परिवेश, परंपरा और सामाजिक रहन-सहन से संयोजित होती है। जिस प्राकृतिक और सामाजिक परिवेश में बच्चों की मानसिकता का विकास होता है, बाल काव्य उससे ही प्रेरित हो भाषा का विकास करता है। इस साहित्य में झाँककर देखें तो हमें बच्चों के स्वभाव और विकास क्रम का एक रोचक परिचय मिलता है और भाषा की वाचिक धरोहर के एक महत्वपूर्ण हिस्से को देख पाते हैं। बाल काव्य की मौखिक धारा न जाने कब से बच्चों के भावों, संदर्भों, जीवन परिवर्तन को गति व विस्तार देते हुए एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को दे रही है। वर्तमान में बाल काव्य मौखिक परंपरा के लिए दादा-दादी का सानिध्य, संयुक्त परिवार, खेल मंडली इत्यादि माध्यमों का अभाव-सा होता जा रहा है। वहीं दूसरी तरफ, विद्यालयी जीवन कड़ा होता जा रहा है। कहीं-कहीं पाठ्यचर्या में कुछ स्तर पर बाल काव्य का प्रयोग भी दिखता है, किंतु बालकाव्य परंपरा में जो अंतर आये हैं उन्हें खोजने और विचार करने की आवश्यकता है।

निष्कर्ष

हिंदी बाल कविताओं का यह निर्विवाद गुण है कि वे सिर्फ़ बच्चों को संबोधित ही नहीं हैं, बल्कि पूरी तरह बच्चों की चीज़ हैं। बच्चों के खेलने एवं गाने-गुनगुनाने की चीज़ जिन पर पहला और आखिरी हक भी बच्चों का ही है। वे लिखी भले ही बड़ों द्वारा गई हों, मगर वे हैं बच्चों की चीज़ें। बाल काव्य अपने 100 वर्षों की परंपरा में विविधता और मात्रा दोनों स्तरों पर गहन हुआ है। पिछले 100 वर्षों से पीढ़ी-दर-पीढ़ी भारतीय बचपन का मानसिक और भावात्मक पोषण इन कविताओं से हुआ है। हमारी 'श्रुति आधारित ज्ञान परंपरा' में भी कविताएँ अनवरत बहती-सी रही हैं। उन्मुक्त हँसी, उमंगें और मीठी खिल-खिलाहटों के साथ-साथ कविताओं ने बच्चों की कल्पना और जिज्ञासा-क्षितिजों का विस्तार करके उसे सहृदय इनसान और बेहतर नागरिक बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

सदंर्भ

घोष, आशीष एवं कृष्ण कुमार (संपा). 1999. *गड़बड़झाला*. राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नयी दिल्ली.

डोभाल, कुसुम. 1990. *हिंदी बाल काव्य में कल्पना एवं प्रतीक तत्व*. लाइब्रेरी बुक सेंटर. मालीवाड़ा, दिल्ली.

मनु, प्रकाश. 2003. *हिंदी बाल कविता का इतिहास*. मेधा बुक्स, शाहदरा.